भारत में हिन्दू स्त्री के वैधानिक अधिकार

डॉ० नीलिमा गुप्ता
एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग,
बी०एस०एन०वी० पी० जी० कालेज, चारबाग लखनऊ

शोध–सार

भारत में, स्त्रियों की उच्चकोटि की विद्वता से लेकर रणक्षेत्र तक गौरवशाली इतिहास रहा है। ईसा पूर्व 300 से लेकर ईस्वी सन के प्रारम्भ तक भारत में कठोर सामाजिक परिवर्तन हुये। जिससे स्त्रियों की स्थिति में भारी गिरावट आई। मनुसंहिता से कात्यायन एवं शुक्र के समय तक, ईस्वी सन के प्रारम्भ से छटीं या सातवीं शताब्दी तक सम्पत्ति से सम्बन्धित कानून के इतिहास में व्यक्तिगत सम्पत्ति तथा स्त्री सम्पत्ति स्त्री धन के विकास दर्शन होते है। सम्भवतः प्राचीन– हिन्दू विधि– निर्माताओं ने संयुक्त परिवार की सम्पत्ति को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से स्त्री को सम्पत्ति की विरासत से वंचित रखा। औपनिवेशिक भारत में पहली बार 1874 में विवाहित स्त्री सम्पत्ति सम्बन्धित अधिनियम द्वारा विवाहित स्त्री को अर्जित आय पर अधिकार की स्वीकृति मिली जो एक क्रान्तिकारी परिवर्तन था। यद्यपि स्त्रियों को सती प्रथा निषेध एक्ट द्वारा मिलें जीवन के अधिकार को सुनिश्चित करने के लिये एक के बाद एक, एक दूसरे के पूरक एक्ट बनाये गये। जैसे विधवा विवाह, शारदा एक्ट, बाल विवाह निषेध एक्ट बनाये गये, जो स्त्रियों को सामाजिक जीवन में सम्मान पूर्वक उपस्थिति दर्ज कराते हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने एक के बाद एक स्त्री की स्तिथि सुधारने एवं सुरक्षा प्रदान करने के लिये एक्ट बनायें। वास्तव में सरकार द्वारा पारित कानून व्यवहारिक होने की अपेक्षा सैद्धान्तिक अधिक हैं। क्योंकि व्यवहार में भारतीय स्त्रियां उन अधिकारों से अभी भी वंचित हैं। ये कानून छाया बनकर रह गये है।

मुख्य शब्द– *हिन्दू स्त्री, अधिकार, कानून।*

भारत में, स्त्रियों की उच्चकोटि की विद्वता से लेकर रणक्षेत्र तक गौरवशाली इतिहास रहा है। वैधानिक दृष्टि से भारत में हिन्दू स्त्रियों की स्थिति अत्यन्तअशक्त एवं असंतोषपूर्ण थी। उन्हें स्त्री धर्म पर पूरा अधीकार प्राप्त होते हुए भी सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त नहीं था। पुत्रि का विधान में कोई आस्तित्व नहीं था पत्नी पति के परिवार का अंग थी और विधवा को मृत समझा जाता था। मनु के अनुसार पत्नी पुत्र तथा दास इन तीनों की कोई सम्पत्ति नहीं होती। ये जो भी सम्पत्ति अर्जित करतें है। वह उसके लिए होती है जिससें वह सम्बन्ध रखते हों। मनु ने स्त्री सम्पत्ति को बताते हुए लिखा है कोई स्त्री अपने विवाह के समय जो कुछ प्राप्त करती है, जो उसे स्नेह के रुप में दिया जाता है, जो कुछ वह पिता भाई व पति से भेंट स्वरुप प्राप्त करती है सभी उसी सम्पत्ति माने जातें है। यद्यपि याज्ञवल्क्य ने पुत्र के साथ ही पत्नी व पुत्री को भी सम्पत्ति से सम्बन्धित कुछ अधीकार प्रदान किये है। सभी पुत्र पुत्रियों को अपने माता के सम्पत्ति को समान रुप से विभक्त करने का अधिकार था। यद्यपि वैदिक आर्य दत्तक पुत्र के पक्ष में नहीं थे। अतः पुत्र की अनुपस्थिति में वंश पराम्परा को बनाये रखने के लिए पुत्री एवं पुत्र ही नाना का अंतिम–संस्कार करता था। वह पुत्री पुत्रिका कहलाती थी। डॉ0 कपाड़िया ने लिखा है कि मुनसंहिता से कात्यायन तक, व शुक्र के समय तक ईसवी सन के प्रारम्भ से छटी या सातवीं शताब्दी तक सम्पत्ति विषयक हिन्दु विधि के इतिहास में व्यक्तिगत सम्पत्ति तथा स्त्री की सम्पत्ति (स्त्री धन) के विकास का दर्शन होता है। बंगाल में दायभाग का प्रचलन था जिसने भारत के अन्य क्षेत्रों में सम्पत्ति विभाजन को व्यावहारिक

स्वीकृति प्रदान की थी। ई०पू० तीन सौ से लेकर ईस्वी सन् के प्रारम्भ तक, भारत में कठोर सामाजिक परिवर्तन हुये। जिससे स्त्रियों की हैसियत में भारी गिरावट आयी ब्रिटिश शासन (1858) की स्थापना तक भारतीय स्त्रियों की स्थिति निकृष्टतम् सीमा तक पहुँच गयी थी।

उन्नीसवीं सदी में उपयोगितावादी वेन्थम् के विधि–निर्माण सम्बन्धित विचारधारा से प्रभावित ब्रिटिश प्रशासकों का एक वर्ग माउन्ट स्टुअर्ट एल्फिंस्टन, चार्ल्स मेटकाफ, जॉन मालकम् आदि क्रमिक सामाजिक परिवर्तन के पक्षधर थे, तो पाश्च्यात्य शिक्षा से प्रभावित प्रबुद्ध भारतीय विद्वान स्त्रियों की प्रस्थिति में सुधार के आकांक्षी थे। राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, केशवचन्द्र सेन आदि विद्वानों ने संगठनों व सामाजिक आन्दोलनों के माध्यम से स्त्री–प्रस्थिति सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त हिन्दुओं ने स्त्रियों के प्रचार–प्रसार,कट्टरपंथियों के प्रचंड विरोध के बावजूद ओजपूर्ण आन्दोलन छिड़े थे। 1829 में सती प्रथा निषेध एक्ट, 1856 में विधवा पुर्नविवाह अधिनियम पारित किये गये। बहुविवाह, पर्दा–प्रथा कन्या–वध, दहेज प्रथा जैसी कुरीतियों के विरुद्ध व्यापक आन्दोलन चलाये गये। ये अधिनियम स्त्रियों को जीवन की सुरक्षा तो दिलाते थे किन्तु सम्मानजनक तरीके से जीवन का अधिकार नहीं देते थे।1872 में विशेष विवाह अधिनियम और 1874 के विवाहित स्त्री की

सम्पत्ति संबंधित अधिनियम में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन छिपा हुआ था। जिससे स्त्रियों को धनोपार्जन योग्य काम करने की प्रेरणा मिलीं, ताकि वे अपनी आय के आधार पर सम्पति बना सकें। संभवतः प्राचीन हिन्दू–विधि–निर्माताओं ने संयुक्त परिवार की सम्पति को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से स्त्री को सम्पति की विरासत से वंचित रखा। तथापि औपनिवेशिक भारत में पहली बार 1874 में विवाहित स्त्री–सम्पति सम्बन्धित अधिनियम द्वारा विवाहित स्त्री को अर्जित आय पर अधिकार की स्वीकृति मिली। जो कि क्रान्तिकारी परिवर्तन था। इसने स्त्री धन के क्षेत्र को विस्तृत बनाया। इसके द्वारा स्त्री की अर्जित आय तथा कलात्मक एवं साहित्यिक कौशल से अर्जित आय को भी शामिल की गया। तद्न्तर 1921 में उत्तराधिकर सम्बन्धित विधेयक प्रस्तुत किया गया जो आठ वर्षों के सतत् संघर्षों के बाद 1929 में पारित हुआ। इस अधिनियम ने पुत्र की पुत्री , बहन औरउसके पुत्र को क्रम में समयुक्त स्थान प्रदान किया गया। पुनः 1937 में सम्पत्ति–विषयक हिन्दूस्त्री के अधिकार अधिनियम पारित किये गये। जिसके अनुसार हिन्दू विधवा को उसके पति की सम्पति में हिस्से के साथ विभाजन का अधिकार दिया गया।

औपनिवेशिक काल में एकल विवाह विवाह विच्छेद के लिये गये प्रयास सफल नहीं रहे। किन्तु 1921–1925 में एक अधिनियम के द्वारा अल्प वयस्क कन्याओं का व्यापार फौजदारी व दण्डनीय अपराध माना गया। जिसका सर्वाधिक लाभ देवदासी प्रथा की समाप्ति को मिला। वास्तव में कुछ स्त्रियों को देवदासी के रुप में मंदिरों में आजीवन सेवा के रुप में जीवन अर्पण करना होता था। इनका मुख्य कार्य नृत्य व संगीत था।यह प्रथा अत्यन्त प्राचीन काल से चली आ रही थी। इसकी मूल प्रकृति जो भी रही हो यह धर्म के नाम पर तथा उनके संरक्षण में होने वाली वैश्यावृति के रुप में देखी जाने लगी। मद्रास में ऐसी स्त्रियों की संख्या दो लाख से भी अधिक थी। धर्म सुधारक डा0 मुतुलक्ष्मी रेड्डी तथा अन्य सुधारकों के प्रयास से 1925 में अधिनियम पारित हुआ। जिसके फल स्वरुप देवदासियॉ भी दण्ड सहिंता के आधीन आ गयी इस अधिनियम से देवदासी प्रथा पर चोट पहुँची। 1929 में शारदा एक्ट पारित किया गया।

1926 तक प्रान्तीय विधायिका के लिये स्त्रियों को पुरूषों के समान शर्तो वाले मताधिकार प्राप्तहुये।[र] औपनिवेशिक भारत में स्त्रियों को मिले वैधानिक अधिकारों का मूल्यांकन करें तो निष्कर्ष यह निकलता है कि स्त्रियों को सती प्रथा निषेध एक्ट द्वारा मिलें जीवन के अधिकार को सुनिश्चित

करने हेतु एक के बाद एक, एक दूसरे के पूरक एक्ट बनाये गये। जैसे– सती प्रथा उन्मूलन की सफलता विधवा विवाह में थी तो बाल विवाह निषेध, विधवाओं की संख्या रोकने के लिये बनाएं गये। बाद में स्त्री धन, अर्जित आय की मान्यता, सम्पत्ति में विधवा व उनके बच्चों के अधिकार प्रदान करने वाले एक्ट, पारिवारिक व सामाजिक जीवन में सम्मान पूर्वक उपस्थिति दर्ज कराते थे। स्वतन्त्र भारत के संविधान में स्त्री पुरुषों की समानता को मूलभूत अधिकारों में शामिल किया गया। मौलिक अधिकारों के अन्तर्गत स्त्रियों की पुरूषों के समान प्रस्थिति मान्य की गयी लिंग के आधार पर किसी भी प्रकार का भेद–भाव न करने पर विशेष जोर दिया गया। सभी भारतीय वयस्क स्त्री–पुरुष को समान मताधिकर प्रदान किये गये। भारतीय स्त्रियों की सुरक्षा और प्रगति के लिये सरकार ने सराहनीय कार्य किये 1951 के खान कानून द्वारा स्त्रियों से खान में काम लेना वर्जित कर दिया और गृह सेवा कानून द्वारा काम के आठ घंटे निश्चित किये गये रहने के लिये जगह और वर्ष में एक माह का सवेतन अवकाश की व्यवस्था की गयी। इसके अलावा प्रसव के समय उन्हें वेतन सहित तीन माह का अवकाश का अधिकार दिया गया। विधवा विवाह कानून द्वारा स्वीकृत किया गया सबसे महत्वपूर्ण हिन्दू कोड बिल 1955 के अन्तर्गत अनेक कानून का निर्माण किया गया। हिन्दू विवाह कानून 1955 द्वारा बहु विवाह को गैर–कानूनी ठहराया गया । तलाक देने की सुविधा स्त्री और पुरुष दोनों को दी गयी हिन्दू उत्तराधिकार कानून द्वारा स्त्री पन स्त्री का अधिकार और पुत्री को बच्चों सहित पिता की सम्पति में उसके भाईयों और उनके बो को समान अधिकार दिया गया हिन्दू अल्पवयस्क और संरक्षण कानून 1956 द्वारा स्त्री को अपने बच्चों का संरक्षण, बच्चा गोद लेने और उसके भरण–पोषण का अधिकार स्वीकार किया गया। 1956 में ही नवयुवक हानिकारक प्रकाशन कानून स्त्री और लड़कियों के अनैतिक व्यापार को रोकने का कानून तथा स्त्री और बच्चों सम्बन्धी लाइसेन्स कानून बनाये गये प्रथम के द्वारा नवयुवको के अनैतिकता के विचारों को फैलाने वाले प्रकाशन को रोकने की व्यवस्था की गयी, द्वितीय के द्वारा स्त्रियों और लड़कियों के अनैतिक व्यापार को रोकने का प्रयत्न किया गया तथातृतीय द्वारा स्त्री और बच्चों के हित सम्बन्धित समुदायों को सरकार से लाइसेन्स लेना आवश्यक कर दिया। 1961 में कानून द्वारा दहेज प्रथा को गैर कानूनी घोषित कर दिया गया। समय–समय पर सरकार ने महत्वपूर्ण एक्ट पारित किये जैसे– इन्डिसेन्ट रिप्रजेन्टेशन ऑफ मन (प्रोहिबीशन) एक्ट–1986, द कमीशन ऑफ सती (प्रवेन्शन) एक्ट–1987(3ऑफ 1988), प्रोटेक्शन ऑफ वूमन फ्राम डोमेस्टीक वायलेन्स एक्ट 2005 सेक्युवेल हरैसमेन्ट ऑफ नूगल द प्लेस (प्रवेन्शन, प्रोहिबीशन एण्ड रिड्रेसल) एक्ट–2013, द क्रिमनल लॉ (एमेन्डमेन्ट) एक्ट–2013। जो स्त्री की सुरक्षा तथा संविधान द्वारा प्रदत अधिकारों को सुरक्षा प्रदान करता है। यह एक व्यवाहारिक रूप से भी स्त्रियों को परिवार समाज और कार्यस्थल में समानता व सुरक्षा प्रदान करता है।महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए भारत सरकार ने 1985 में महिला एवं बाल विकास विभाग की स्थापना तथा 1992 में राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना की गयी एवं देश में अन्तराष्ट्रीय महिला दिवस मनाये जाने लगा। यही नहीं सरकार ने 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष भी घोषित किया गया। इसी प्रकार विभिन्न योजनाओं एवं कार्यक्रमों को सरकार समय समय पर कार्यान्वित करती रहती है। जैसे बालिका सम्वृद्धि योजना, किशोरी शक्ति योजना, इन्दीरा महिला योजना, सर्वसती साईकल योजना, स्वयम सिद्धा योजना ईत्यादि।

वास्तव में वैधानिक परिर्वतनों या संविधान प्रदत्त अधिकारों से अधिकांश स्त्रियां लाभ नहीं उठा सकी, जिसका प्रमुख कारण उनमें चेतना का अभाव एवं परिवार एवं समुदाये की ओर से वांछित सहयोग प्राप्त नहीं होना था। यद्यपि शिक्षा व जीविकोपारजन से स्त्रियों की आर्थिक स्थिति सूधरी है, लेकिन सामाजिक बंधनों से मुक्त होना बाकी है। सरकार द्वारा पारित विधान व्यवाहारिक होने की अपेक्षा सैद्धांतिक अधिक है वहीं परिवार और समाज उन्हें पूरी तरह से स्वीकार नहीं कर सकें है। भारत में स्त्री अधिकारों पर विहगंम दृष्टि

डाली जाय तो यह तथ्य निकलता है। स्त्री को वैधानिक अधिकार मिले, किन्तु व्यवहार में उन अधिकारों से अभी भी वंचित है। वास्तव में वैधानिक अधिकार दे तो दिये गये, उन्हें लागू करने की इच्छा शक्ति के अभाव के कारण स्त्रियां आज भी सामाजिक समानता नहीं प्राप्त कर सकी ये कानून छाया बनकर रह गये। संघर्ष जारी है

सन्दर्भ सूची

1. शैलेन्द्र पान्थरी व अमलेन्द्र प्रताप सिंह, आधुनिक भारत का समाजिक इतिहास,2000, वाराणसी, पृष्ठ–247।
2. वही।
3. वही।
4. पर्सीवल स्पियर, द आक्सफोर्ड हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, पृष्ठ–202 उद्धृत शैलेन्द्रपान्थरी व अमलेन्द्र प्रताप
5. सिंह, आधुनिक भारत का समाजिक इतिहास, पृष्ठ 171।
6. पान्थरी व अमलेन्द्र प्रताप सिंह, आधुनिक भारत का समाजिक इतिहास, पृष्ठ 247–248।
7. वही पृष्ठ 248।
8. वही पृष्ठ 243।
9. पान्थरी व अमलेन्द्र प्रताप सिंह, आधुनिक भारत का समाजिक इतिहास, पृष्ठ 257–258।